शोध मंथन Vol. XV No.I Jan.-Mar.2024 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

वेद प्रकाश 'वटुक' जी के काव्य में नारी चेतना

बबली रानी
शोधार्थी
ईमेलः *bablirani225@gmail.com*

प्राप्तिः 22.01.2024
स्वीकृतः 25.03.2024

3

डॉ0 वेद प्रकाश वटुक जी की नारी चेतना उनके साहित्य से सतत् प्रवाहित होती सलिला–सी प्रतीत होती है। उनकी सभी रचनाओं में नारी के विविध रूप देखने को मिलते हैं। कहीं वह माँ और बड़ी बहन के रूप में ममतामूर्ति वात्सल्यमयी छाया–सी नज़र आती है तो कहीं प्रेम, विश्वास और कभी छल–कपट करती पत्नी कभी वह प्यारी बिटिया और कभी एक बहुत अच्छी दोस्त, कभी बेटी से भी बढ़कर दायित्व निभाती बहु और कभी भाई की सहधर्मिणी।

संघर्षशील जीवन के बाद जब उनकी बहन नारायणी का स्वर्गवास हुआ, तोइससे उन्हें अत्यंत भावात्मक चोट पहुची। निम्नलिखित पंक्तियाँ उनके मर्म को प्रकट करती हैं–

''और उसके जाने से
टूट गया मेरा रक्षा कवच
राखी का कच्चा धागा
जिसे वह बांधती थी
ताकि विश्व की कोई आधि–व्याधि
पहुंचा न सके मुझे हानि
यमी की भांति
बचाने की अपने भाई को
जीवन संग्राम के हर व्यूह से
मिट गया मेरा
भैया दूज का पर्व
आज चली गई वह
मेरी माँ, मेरी शिक्षिका
मेरे इतिहास की निर्माता
मेरी बहिन
ब्रह्माण्ड में अपार
भीड़ होते हुए भी
जिसके न होने से

सृष्टि का हर कोना
हो गया है मेरे लिए
एक विशाल अनन्त शून्य''

उनकी नारी–चेतना कभी अपनी मृत बहन को स्मरण और नमन करती है, तो कभी वह अपनी प्रेयसी की स्मृतियों को संजोए रखना चाहते हैं। स्मृतियों में भी वे कटु स्मृतियाँ हीं अपितु केवल अपने प्रेम की स्मृति को ही थामना, संभालना चाहते हैं, एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

''रात के रथ में जुते हुए
ओ क्षणों के अश्व
रूक जाओ
खींच लो स्मृतियों की लगाम
एक बार गिनने का
अवसर दे दो
प्राणों को
कि किन–किन रूपों में
मैंने प्रियतमा को
किया है प्यार
अविराम!''

उनकी नारी–चेतना भारतीय समाज के उस युग का भी चित्र खींचती है, जब भारतीय समाज के परिवारों में पुरूषों का वर्चस्व इस प्रकार था कि उनकी कही बात पत्थर की लकीर होती थी, किसी भी प्रकार स्त्री उसका प्रतिरोध अथवा प्रतिकार नहीं कर सकती थी। अपनी आत्मकथा में उन्होंने पुरूष वर्चस्वादिता को प्रकट करते हुए कहा है–

''मेरी दो बड़ी मामियाँ खजान देई और मूर्ति बहनें थीं। उनका पितृगृह खामपुर में था। वहीं गांव में मेरी छोटी चाची का भी पीहर था और अनेक बार मैं वहां चाची के पितृगृह में गया भी, पर मामियों के पितृगृह का ज़िक्र भी नहीं आता था। उसका कारण था, किसी बात को लेकर मामा जी के परिवार ने अपने को अपमानित अनुभव किया और फरमान सुना दिया गया कि दोनों मामियाँ अपने माता–पिता, भाई–भाभियों से कोई संबंध नहीं रखेगी और उसके बाद वे दो दशक तक पीहर नहीं गई। भारतीय परिवारों में पति का कितना कठोर अधिनायकवाद व्याप्त है, इसका यह प्रमाण है। हमने कभी भी मामियों या उनकी संतानों से उनके ग्राम, परिवार का जिक्र नहीं सुना। मानों वे कभी थे ही नहीं।''

बटुक जी ने अपनी प्रखर नारी चेतना के कारण भारतीय एवं पश्चिमी समाज में नारी की दशा का वास्तविक चित्रण तो किया ही है, साथ ही उन्होंने यह भी लिखा है कि वे वास्तव में नारी को कैसी दशा में देखना चाहते हैं एक उदाहरण–

''करूण गीत मत गाओं
न बाँसुरी बजाओं तुम।

दुर्गाएं बन जाएं,
क्रांतिस्वर गुजाओं तुम!
बदली के साथ न अब,
अश्रु भरी पाती को।
भेजे दुःख बहन–सुता,
पीहरजन घाती को।
रिश्तों के नाम बनीं,
विषम–बन्ध काराएं।
द्वार–द्वार खोलो सब,
श्रृखला मिटाओ तुम!''

परन्तु पश्चिमी समाज में नारी की स्थिति भिन्न थी, जिसे वटुक जी ने केवल देखा ही नहीं, अपितु झेला भी था। जब अमेरिका में उनकी पत्नि सिलविया ने उन्नीस वर्षों के दाम्पत्य जीवन, प्रेम, निष्ठा, विश्वास और चार संतानों के होने के बाद अचानक उन्हें धोखा देते हुए पूरी तरह से आर्थिक और भावनात्मक रूप से ध्वस्त कर दिया और इतने वर्षों तक उनका लाभ उठाने के बाद उन्हें अकेला छोड़कर किसी और से विवाह कर लिया, नारी का यह रूप देखकर वटुक जी को इतनी ठेस लगी कि वे लंबे समय तक खुद को संभाल न सके। अपनी आत्मकथा में नारी के धूर्त रूप को प्रकट करते हुए वटुक जी कहते हैं कि–

''अब मुझे इस बात पर और भी क्षोभ हुआ कि जब मैं बच्चों की देखभाल कर रहा था तो उनके काम के साप्ताहिक बंटवारे का चार्ट इसलिए था कि वह गुलछर्रे उड़ाये, अपने रोमांस को शिखर पर लाये। मेरी नज़रों में तो वह गिरती ही चली गई। जूडी की बात पग–पग पर याद आती रही– योर वाइफ इज़ ए डीवियस वुमन (तुमरी पत्नि एक धूर्त औरत है) सारे जीवन नारी सशक्तिकरण/समानता सम्मान का पक्षधर रहते हुए भी उस समय मुझे भारतीय संस्कृति में प्रचलित सूक्तियां याद आने लगी थी। नारी चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं देवो न जानाति कुतो मनुष्यः या ग्रामीण लोकोक्ति–तिरिया चिलत्तर जाने न कोई। खसम मार कै सत्ती होई।''

इस तरह छले जाने के बाद वटुक जी ने बड़ी मुश्किल से स्वयं को संभाला, पर अभी इतना ही पर्याप्त नहीं था। जीवन में अभी एक बार और उन्हें नारी के प्रेम और विश्वास के नाम पर छला जाना था। एक धोखे से बड़ा दूसरा धोखा, एक दुःख से बड़ा दूसरा दुःख उन्हें और सहना था। अपनी दूसरे पत्नी कल्पना से भी उन्हें मात्र दुःख ही मिला अपने दुःख को अपनी आत्मकथा में प्रकट करते हुए वटुक जी लिखते हैं–

''उसने अपने व्यवहार से मेरे मन में जो घृणा का भाव सिलविया के प्रति था विगत आठ वर्षों से और गहरा घाव था, वह लगभग मिटा दिया था। कहते हैं अकबर ने एक रेखा खींचकर बीरबल से कहा था कि उस रेखा को छोटी करे बिना छुए। बीरबल ने उस रेखा के नीचे और बड़ी रेखा खींच दी। ऐसे ही कल्पना ने अपने डेढ़ वर्ष के कुल सहवास में मुझे इतना दुःख दिया कि

सिलविया का दिया जख़्म पूरा नहीं तो नब्बे प्रतिशत तो भर ही गया और इस विश्वास से मोहभंग करने के लिए भी कि भारतीय महिला पश्चिमी महिलाओं से अधिक निष्ठावान होती हैं, सती–सावित्री।''

डॉ0 बटुक ने सदैव एक सहृदयी व्यक्ति की तरह नारी का केवल सम्मान ही करना जाना था, उसे केवल प्रेम ही करना जाना था। इसी कारण दोनों ही बार पत्नि द्वारा दिये गए आघात और आर्थिक हानि का भी उन्होंने कोई प्रत्युत्तर नहीं दिया। उन्हें अपने प्रेयसी अथवा पत्नि से केवल प्रेम ही करने का अभ्यास था छल नहीं। एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

''ताज्जुब नहीं होता इस बात पर
कि हम दोहराते हैं अपने वाक्य
शब्द–शब्द, वर्ण–वर्ण
ताज्जुब तो यह है
कि हमारी कथा को
मिलता है रोज
नया पाठ
नया अर्थ
हमारी आंखों के उथलेपन में
उतर आती है रोज़
नई गहराई
कितना असाधारण है ओह
हमारा साधारण प्यार!''

भारतीय समाज में नारी भले ही सम्मान की पात्र रहीं है, परन्तु रामराज में भी माता सीता के अनेक बलिदान और त्याग भी उन्हें कोई अधिकार नहीं दे पाए थे, केवल सम्मान ही मिला था, वो भी बार–बार अपमानित और तिरस्कृत होकर। आज भी स्थिति में बहुत परिवर्तन नहीं आया है। नारियों की दुर्दशा पर प्रकाश डालते हुए उत्तर रामकथा में वटुक जी लिखते हैं–

''कितनी अभागिन नारियाँ हैं क्रूरतम परिवेश में,
जिनका न कोई घर कहीं है आपदा–दुःख क्लेश में
पितु वास शैशव में मिला, पति–वास यौवन प्राप्त कर
वह अगर दोनों से गई, तो जायगी फिर कौन घर?''

यह सत्य तो था परन्तु वटुक जी ने सदैव नारी को 'शक्ति' माना है। वे उसे पुरूषाधीन नहीं मानते, स्वयं शक्ति सौभाग्यवती मानते है। अपने हाइकु संग्रह में उन्होंने लिखा भी है–

''शत्रु भी कहे
'सौभाग्यवती भव'
ऐसी हो बेटी।

आत्मविश्वास
कन्या सौभाग्यवती
बिना वर भी।
शक्ति है नारी
फिर वह क्यों रहे
पुरुषाधीन।''

'वटुक' जी की नारी चेतना नारी के कुरूप चरित्र को स्वीकार नहीं कर पाती। वह नारी को शक्ति रूप मानते हैं। जो जननी के रूप में प्रत्येक संकट से अपनी संतान की रक्षा करती है, उसकी वात्सल्य की छाया में वह शक्ति है कि वह अपनी संतान को बड़ी से बड़ी मुसीबत से भी बचा लेती है। अपनी माँ की 70वीं वर्षगांठ पर बटुक जी ने लिखा था–

''खड़े हो गये हे माँ ये समाज के साँप उठा फन
आधि–व्याधि–अध–ग्रस्त कलुशमय तन–मन मेरा जीवन
बाहर के जग में कोलाहल, बीहड़ पथ असफलता
अन्तर जैसे गर्म राख है, झुलसा मन विह्वलता
दग्ध प्रीत की पीर निरंतर मुझे कचोट रही है
एक ओर आशीष तुम्हारा एक ओर जग सारा
एक ओर माँ वरद–हस्त है एक ओर अध कारा
एक ओर हैं थके पांव, मुरझाया मन, विरोध–रव
एक ओर वृद्धावस्था से जर्जर है माँ तनु तव
एक ओर सारे जग का प्रण मुझे फूंक देने को
एक ओर माँ की वत्सलता अभयदान देने को
वाम हुए हैं देव रूष्ट हैं भाग्य पुजारी मुल्ला''

वटुक जी की नारी चेतना माँ के आशीष में इतनी शक्ति मानती है कि पूरा संसार और उसकी शक्तियाँ भी उस व्यक्ति का कोई अहित नहीं कर सकती जिसके सिर पर माँ का वरद हस्त हो। वटुक जी का सौभाग्य था, कि उन्हें माँ के साथ–साथ तीन बड़ी बहनों से भी माँ जैसा ही प्यार मिला था। पर अपने जीवन में उन्होंने अपनी माँ, तीन बड़ी बहनों के अतिरिक्त दो पत्नियों, पुत्रियों, पुत्रवधुओं, मित्रों और भाभियों के रूप में तो स्त्रियों को देखा, जाना और समझा ही था, वे उनके सुख–दुःख में साझीदार भी रहे थे, उनके जीवन की समस्याओं को, और सबलताओं को उन्होंने बहुत निकट से सदैव जाना और समझा था। आवश्यकता पड़ने पर उन्हें सहायता एवं उचित मार्गदर्शन भी दिया। इस सबके अतिरिक्त उनकी नारी चेतना को विस्तृत आयाम देने के लिए उनके औपचारिक जीवन में आई उन विदूषी महिलाओं का भी योगदान है, जिन्होंने अपनी सृजनशीलता, बुद्धिमत्ता एवं प्रतिभा और प्रभाव से उन्हें प्रभावित किया था डॉ0 वटुक की इस बहुरंगी नारी चेतना के दर्शन हमें

उनके साहित्य में, उनकी सृजना में पग–पग पर होते हैं, जहां किसी कृति पर आधार तो किसी पर पूरा प्रभाव नारी चेतना का ही दिखाई देता है।

वटुक जी के संपर्क में आई स्त्रियों ने चाहे उनके साथ भला किया हो या बुरा पर वटुक जी ने सदा उनका उपकार ही माना कभी अच्छा करने के लिए तो कभी बुरा करके उन्हें जीवन में महत्वपूर्ण सीख देने के लिए।

संदर्भ

1. वटुक, वेद प्रकाश. (2000). नये अभिलेख का सूरज. भा0सा0प्र0: 286, चाणक्यपुरी, सदर, मेरठ. पृष्ठ **15.**
2. वटुक, वेद प्रकाश. (2016). शहीद न होने का दुख. मेघा सहकार प्रकाशनः 35/1, कैलाशपुरी, मेरठ. बैशाखी. पृष्ठ **61.**
3. वटुक, वेद प्रकाश. (1994). बाँहों में लिपटी दूरियाँ. भा0सा0प्र0: 286, चाणक्यपुरी, सदर मेरठ. पृष्ठ **81.**
4. वटुक, वेद प्रकाश. (1981). लौटना घर के बनवास में. भा0सा0प्र0: 286, चाणक्यपुरी, सदर, मेरठ. वैशाली. पृष्ठ **39.**
5. वटुक, वेद प्रकाश. (1980). एक बूँद और. भारतीय सा0 प्रकाशनः 286, चाणक्यपुरी, सदर, मेरठ. पृष्ठ **103.**
6. वटुक, वेद प्रकाश. (1973). बंधन अपने देश पराया. अलंकार प्रकाशनः दिल्ली. रचनाकाल. 17–31, जनवरी. पृष्ट **25.**
7. वटुक, वेद प्रकाश. (1978). नीलकंठ बन न सका. अलंकार प्रकाशनः 666, झील, दिल्ली. पृष्ठ **11.**
8. वटुक, वेद प्रकाश. (2017). घृणा का ब्याज. निरुपमा प्रकाशनः 506/13, शास्त्री नगर, मेरठ (उ0प्र0). पृष्ठ **71.**
9. वटुक, वेद प्रकाश. (2020). कल रात के अंधेरे में. निरुपमा प्रकाशनः 506/13, शास्त्री नगर, मेरठ (उ0प्र0). पृष्ठ **145–146.**
10. वटुक, वेद प्रकाश. (2014). उत्तर रामकथा. भारतीय साहित्य प्रकाशनः 57–ए, न्यू आर्य नगर, जेल रोड, मेरठ. पृष्ठ भूमिका अंश।